होता है वहाँ 'आल्हा' छंद प्रयुक्त होता
तथा कर्णकटु शब्दों का प्रयोग मिलता
का स्वर ऊँचा और ललक से भरपूर
ों के छंद-विधान की विशेषता अपनी

-बहन, माता-पुत्र, प्रेम-स्नेह आदि का
अति महत्वपूर्ण और संवेदनात्मक स्तर
वन का आवाहन करता है।

९९।
वास्तव, पृष्ठ-७९।
पृ०-३१२।
वास्तव, पृष्ठ-४७।
पृ०-३०२ व पृ०-३१२।

वास्तव, पृष्ठ-२३।
वास्तव, पृष्ठ-८३।

सं०-१५२।
ास्तव, पृष्ठ-५६।
ास्तव, पृष्ठ-४४।

द्वारा श्री यू० पी० सिंह
२, बैंक रोड, नियर (डॉ० मिताल)
कटरा, इलाहाबाद
पिन-२११००२

स्त्री दशा को दिशा देता स्त्री लेखन

पूनम सिंह

मनुस्मृति का यह चिर-परिचित श्लोक— 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते स्मंते तत्र देवता:' इस बात की ओर संकेत करता है कि प्राचीन काल भारतीय महिलाओं का स्वर्णिम काल था। पुरुष प्रधान व्यवस्था होने के उपरान्त भी महिलाओं का समाज में सम्मान था, प्रतिष्ठा थी और उन्हें आगे बढ़ने की पूरी स्वतंत्रता थी। अपनी अगाध प्रतिभा व आध्यात्मिक ज्ञान से वे समाज को यह बताने में सक्षम हुई कि वे पुरुषों से किसी भी प्रकार कम नहीं हैं, परन्तु प्राचीन काल से लेकर अब तक पुरुष प्रधान व्यवस्था चली आ रही है और पहले की अपेक्षा आज यह व्यवस्था व्यापक व सबल रूप से स्त्रियों पर हावी दिखाई पड़ती है। पुरुष जहाँ से जीना शुरू करता है, स्त्री को वह शुरूआती जमीन कभी प्राप्त नहीं हुई बल्कि इतिहास उठाकर देखें तो पाएँगें कि पुरुष जगत में स्त्री को अविकसित चरण में ही रखा हुआ था, यह तो स्त्री ही है जिसने आधुनिक युग में संघर्ष करते हुए अपने आप को विकसित किया।

यह सर्वविदित तथ्य है कि सबसे पहले स्त्री ने ही पुरुष को घर बनाकर रहने की प्रेरणा दी, परन्तु आज उसी घर में स्त्री को मानसिक, शारीरिक, भावनात्मक आदि विभिन्न रूपों में घरेलू हिंसा का शिकार होना पड़ रहा है। परिणाम स्वरूप स्त्री का अस्तित्व न केवल परिवार में बल्कि परिवार के बाहर भी कमजोर हुआ है। पुरुष पहले भी स्त्री पर अपना अधिकार चाहता था और आज भी वह यही चाहता है। यही कारण है कि वह स्त्री को अपने अधीनस्थ स्थिति में बनाये रखने के लिए संस्कृति, जाति, धर्म, मूल्यों, परम्पराओं आदि का प्रयोग उसके शोषण के रूप में करता है। प्रत्येक शासित शोषित नहीं होता, परन्तु प्रत्येक स्त्री शासित भी है और शोषित भी। स्त्री की यह दशा देखते हुए जयशंकर प्रसाद की यह विख्यात पंक्तियाँ व्यंग्य की प्रतीत होती है—

"नारी! तुम केवल श्रद्धा हो विश्वास-रजत-नग पगतल में,
पीयूष-स्रोत-सी बहा करो जीवन के सुन्दर समतल में"[१]

पुरुष सत्ता संस्कृति का सहारा लेकर स्त्रियों को आगे बढ़ने से रोकने का प्रयास करती है जैसे स्त्रियों का पहनावा कैसा हो, विधवा-विवाह का विरोध, विधवाओं को मंदिरों में जाने से रोकना आदि वे संस्कृति की आढ़ में ही करते हैं ऐसा नहीं है कि स्त्री के जीवन में संस्कृति महत्वपूर्ण नहीं है या फिर 'स्त्री मुक्ति' के समर्थक संस्कृति ही अवज्ञा करना चाहते हैं। स्त्री केवल उस संस्कृति को नहीं चाहती जहाँ संस्कृति दमनकर्त्ता के हाथ में एक हथियार की तरह हो। स्त्री को स्वभाव से चंचल एवं पुरुषों के मुकाबले काफी हीन कहा गया है। मनु को पक्का भरोसा है कि स्त्री को नियंत्रण में रखा जाना चाहिए क्योंकि उसकी कामना को संतुष्ट नहीं किया जा सकता। स्त्री के प्रति विद्वेष से भरी ऐसी ढेरों उद्घोषणाएँ हैं। पुरुषों की इन चालों को धर्म ने भी ज्यादा मजबूती दी। मानव समुदाय का अर्थ स्त्री व पुरुष दोनों ही समझा जाता है केवल पुरुष नहीं। जाति व धर्म के आधार पर स्त्री सबसे निचली सीढ़ी पर है क्योंकि पिता या पति द्वारा ही उसकी जाति और वर्ग भी पहचाना जाता है। यह परम्परा आज की नहीं बल्कि मीराबाई के समय में भी विघटन थी, अपितु उससे पहले से ही चली आ रही है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था व स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में असमानता

मीरा की इन पंक्तियों में विद्रोह के रूप में दिखायी पड़ती है।

'लोकलाज कुलकाण जगत की, दी बहाय ज्यूं पांणी।
अपने घर का पर्दा कर लो, मैं अबला बौरांणी।।''[२]

वर्गीय ढाँचा ही जातिगत ढाँचा है। स्त्री चाहे किसी भी वर्ग या वर्ण की हो उसका वर्ग एवं वर्ण तो पुरुष के संदर्भ में ही परिभाषित होता है, उसकी जाति तो विवाह के बाद ही स्थापित होती है। संतान भी पिता के नाम से ही जानी जाती है। ब्राह्मण कन्या यदि शूद्र से विवाह करे और शूद्र संतान की माँ बने तो संतान शूद्र ही कहलाएगी ब्राह्मण नहीं। स्त्री अपनी संतान को नौ माह गर्भ में रखकर प्रसव पीड़ा सहकर जन्म देती है, परन्तु जन्म के पश्चात् वह पिता के ही नाम, जाति, धर्म से पहचाना जाता है, स्त्री का उसपर कोई अधिकार नहीं होता। स्त्री गर्भ को एक साधन के रूप में देखा जाता है, जिस पर पुरुष सत्ता नियंत्रण चाहती है। महत्व तो केवल बीज का है जिसका रक्षक पुरुष है। पुरुष के पास बीज का होना एक प्राकृतिक घटना है मगर इसको श्रेष्ठ और महत्वपूर्ण मानना ऐतिहासिक घटना है। समय चाहे जितना भी बदल गया हो परन्तु कुछ प्रश्न स्त्रियों के लिए वैसे ही बने हैं जैसे पहले थे—क्यों स्त्री को अपने पिता या पति की ही जाति, वर्ण से जाना जाता है? क्यों स्त्री को ही विवाह के पश्चात् अपा नाम व पहचान बदलनी पड़ती है? क्यों जन्म के अलावा स्त्री का उसकी संतान पर कोई अधिकार नहीं होता? आज घर और बाहर स्त्री की समस्याओं और विडंबनाओं को रधुबीर सहाय की यह कविता बेहद सुन्दर ढंग से रखती हैं—

''पढ़िए गीता
बनिए सीता
फिर इन सबमें लगा पलीता
निज घर-बार बसाइए
होंए कटीली
लकड़ी सीली
आँखें गीली
घर की सबसे बड़ी पतीली
भर-भर भात पकाइए।''[३]

स्त्री की जिस खमोशी ने उसे कैद कर रखा था वह अब तार्किकता और प्रश्नाकुलता की ओर बढ़ रही है। आज स्त्री भोग्या से 'वस्तु के रूप' में तब्दील हो गयी है। भारतीय समाज में स्त्री की गुलामी का इतिहास जितना पुराना है, उस गुलामी से मुक्ति के लिए स्त्री के संघर्ष का इतिहास भी उतना ही पुराना हैं स्त्री की दयनीय दशा को दिशा देने का एक सफल प्रयास स्त्री लेखन ने किया है। 'नारी मुक्ति' के सवाल पर अनेकों बार बहसे हुई परन्तु इसको एक प्रवाहपूर्ण दिशा स्त्री लेखन द्वारा ही प्राप्त हुई है। आज की स्त्री लेखिकाओं ने नारी के उन मुद्दों को उठाने का कार्य किया है जिस पर कभी पुरुष लेखकों ने ध्यान देने व उनके बारे में लिखने का प्रयास नहीं किया। आज भी समाज में स्त्री के साथ हो रहे लिंग व जातीय भेदों को लेखिकाओं ने अपनी रचनाओं में और विस्तृत रूप से उजागर किया है। नारी के सामाजिक, सांस्कृतिक, मानसिक, पतन को स्त्री लेखन के द्वारा लेखिकाओं ने पाठकों के सामने रखा है उन्होंने अपनी रचनाओं में नारी सम्बन्धित समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है। स्त्री लेखन स्त्री की आकांक्षाओं का दर्पण है। यह स्त्री की मानवीय इयत्ता को पाने और जीने का स्वप्न है, मुक्ति की राहों के अन्वेषण का संघर्ष है, और उन राहों पर अविराम चलने की संकल्पदृढ़ता भी। स्त्री लेखन स्त्री मानस के तलघर को बिना किसी छेड़छाड़ के सामने रखता है जहाँ व्यवस्था के विरोध में उफनती हुंकारों के साथ व्यवस्था में परित्राण पाने की बेचारगियाँ भी है और भेड़ की तरह जिबह होने की यंत्रण के साथ भेड़िया बनकर दूसरों को लीला जाने की कुटिलताएँ भी। इसे मानवीय दुर्बलताओं की नैसर्गिग अभिव्यक्ति कहिए या अन्तर्विरोधों का स्वीकार- स्त्री लेखन

पांणी।
।''२
या वर्ण की हो उसका वर्ग एवं वर्ण
के बाद ही स्थापित होती है। संतान
ाह करे और शूद्र संतान की माँ बने
ह गर्भ में रखकर प्रसव पीड़ा सहकर
से पहचाना जाता है, स्त्री का उसपर
ता है, जिस पर पुरुष सत्ता नियंत्रण
ऽ पास बीज का होना एक प्राकृतिक
। समय चाहे जितना भी बदल गया
यों स्त्री को अपने पिता या पति की
नपा नाम व पहचान बदलनी पड़ती
हीं होता? आज घर और बाहर स्त्री
हद सुन्दर ढंग से रखती हैं—

र्किकता और प्रश्नाकुलता की ओर
भारतीय समाज में स्त्री की गुलामी
र्ष का इतिहास भी उतना ही पुराना
ने किया है। 'नारी मुक्ति' के सवाल
द्वारा ही प्राप्त हुई है। आज की स्त्री
र कभी पुरुष लेखकों ने ध्यान देने
के साथ हो रहे लिंग व जातीय भेदों
है। नारी के सामाजिक, सांस्कृतिक,
ाने रखा है उन्होंने अपनी रचनाओं
ी की आकांक्षाओं का दर्पण है। यह
हों के अन्वेषण का संघर्ष है, और
के तलघर को बिना किसी छेड़छाड़
वस्था में परित्राण पाने की बेचारगियाँ
सरों की लीला जाने की कुटिलताएँ
तर्विरोधों का स्वीकार- स्त्री लेखन

पारम्परिक 'माइंड सेट' दोनों की ताकत को एक ठोस सामाजिक-मानसिक सच्चाई और चुनौती के रूप में सतह पर लाता है। स्त्री लेखन के इस प्रयास से महिलाओं को एक आशा व सम्बल प्राप्त हुआ है। जिन समस्याओं से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर वे खोज रही थी उन प्रश्नों के जवाब स्त्री लेखन सामने लाता है। आज समस्त साहित्य में स्त्री लेखन अत्यन्त सहजता, गंभीरता और बिना किसी अवरोध के अपने विवादों, व्यथाओं व तकलीफों को व्यक्त कर रहा है। ''मृदुला गर्ग के अनुसार 'नारी चेतना'' के फेमिनिज्म (Feminism) का सार्थक अनुवाद है। इसके अनुसार हर वह स्त्री व पुरुष फेमिनिस्ट (Feminist) है जो नारी चेतना की दृष्टि से सम्पन्न है।''[४] नारी स्त्री लेखन मानवीय अधिकारों को संघर्षपूर्ण मांग करने वाला साहित्य है। स्त्री साहित्यकार जब सामाजिक सच्चाइयों और समाजशास्त्रीय आँकड़ों को निर्विकार दृष्टि से देखती हैं तो रचना अपने आप ही सृजनात्मक ऊँचाइयों पर पहुँच जाती है। पिछले चार-पाँच दशकों के स्त्री लेखन ने स्त्री के कुछ तीखे, ज्वलंत प्रश्नों, अंतर्विरोधों और विरोधाभाषों को अपने लेखन के माध्यम से प्रस्तुत किया है जिससे स्त्री लेखन की एक अलग पहचान बनने लगी है। असल में १९९० के बाद स्त्री लेखिकाओं ने स्त्री की नियति और स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की रिक्ती को लेकर बिसूरने की जड़ता को उभरकर समाज के लिए कुछ पुख्ता और रचनात्मक करना चाहती हैं। भन्नू भंडारी, कृष्णा, सोबती, मृदुला गर्ग, नासिरा शर्मा आदि की रचनाओं में नारी के अधिकारों के प्रति सजगता दिखाई देती है। इनका लेखन आक्रामक, तीखा और पितृक समाज की आलोचना से भरा है। जो आज की स्त्री को खुलकर शोषित समाज के खिलाफ बोलने का साहस प्रदान करता है। इन लेखिकाओं ने अपने लेखन में मुख्य रूप से स्त्रियों के प्रति हो रहे धार्मिक, सांस्कृतिक व सामाजिक अन्याय के विरोध में आवाज उठाई है। आज का स्त्री लेखन पूर्व के स्त्री लेखन से कई अधिक सशक्त, स्वतंत्र व समाज में स्त्री के अस्तित्व को उभारने वाला लेखन है। पूर्व में होने वाले स्त्री लेखन में स्त्री की परम्परागत छवि का ही निरूपण था, किन्तु उसके पीछे जो राजनीतिक दृष्टि, विचारधारा तथा पितृसत्तात्मक नैतिक मूल्य काम करते थे उस पर विचार नहीं होता था किन्तु आज स्त्री लेखन का एक नया स्वरूप उभर कर सामने आता है। आज स्त्री ने बाहर पुरुष सत्ता के समक्ष स्वयं को साबित करने का पूरा प्रयास किया है जो उनके लेखन द्वारा दृष्टिगोचर होता है। जब तक स्त्री लेखन अन्याय, अत्याचार का प्रतिरोध नहीं करता, नारी की सुरक्षा के लिए संघर्ष नहीं करता तब तक स्थितियाँ नहीं बदलेगी। स्त्री लेखन का सबसे अहम् दायित्व है स्त्री पाठिकाओं को झकझोरना, उनके पारम्परिक जर्जरित संस्कारों को तोड़ना जिनमें वे बुरी तरह जकड़ी हुई है। इसके बिना स्त्री समाज की सोच को नहीं बदला जा सकता। ''स्त्री लेखन से महिलाओं को पूर्ण रूप से 'फीडबैक (Feedback) मिलता है। स्त्री लेखन स्त्री मन की ही अभिव्यक्ति है। नारी ने नारी की गूँगी पीड़ा को लिखा, उजागर किया उसके मौन को शब्द दिये।''[५] स्त्री लेखन स्त्री समाज को सही दिशा दे रहा है, उसकी चेतना के विकास में सहायक सिद्ध हो रहा है तथा उसके अन्दर के स्वत्व के प्रति जागरूकता उत्पन्न कर रहा है।

खुद अपने आप और अपने युग से दोहरे संलाप की संभावना के चलते कई सशक्त महिला लेखन से एक प्रकार की अंर्तध्वनि उठती है— ''कोई नहीं जानता की अंदर के पानियों में जो सपना कांपता है, कब असलियत का रूप लेगा।''[६] स्त्री लेखन में नये संदर्भ नयी समस्याएँ और नये युग की टकराहटों की ध्वनि है आज का स्त्री लेखन पुरुषार्थवादी समीक्षा का निरही अनुगामी मात्र नहीं रहा है वह हर नये और परती जमीन तोड़ने वाले लेखन जैसा आक्रामक और सतर्क है। 'कृष्णा सोबती' का 'डार से बिछुड़ी', 'जिन्दगीनामा', 'मित्रों मरजानी', 'ए लड़की', 'मन्नू भण्डारी' का 'महाभोज' जैसे नारीवादी लेखन ने नारी के दुख दर्द, उसके द्वन्द्वों और तनावों, संताप, अभिशाप व उसकी गूँगी पीड़ा के मौन को वाणी दी है। ऐसे लेखन के केन्द्र में नारी की भयावाह समस्याएँ है, पितृ सत्तात्मक मर्यादाओं की तीखी आलोचना है जिसने स्त्री समाज का खुला दमन किया है। इस प्रकार के लेखन से स्त्री की दशा में अत्यन्त व्यापक रूप में सकारात्मक बदलाव आया है।

कृष्णा सोबती, मन्नू भण्डारी, चित्रा मुद्गल, नासिर शर्मा, मेहरून्निसा परवेज जैसी लेखिकाओं के लेखन में नारी मुक्ति के लिए जिस चेतना का विकास हो रहा है वह नारी समाज के लिए रामबाण जैसा है। इनके लेखन से नारी की चेतना में अपने अधिकारों, अस्मिता, स्वतत्व, अस्तित्व के बारे में तेजी से जागरूकता बढ़ी है। जैसे-जैसे नारी लेखन रचनात्मक और आलोचनात्मक स्तर पर नारियों के लिए जबर्दस्त चेतना जगाने का काम करेगा उसी अनुरूप स्त्री की दासता से मुक्ति हो सकेगी। यदि स्त्री लेखन दलित, शोषित पीड़ित स्त्रियों के लिए सोचेगा तो उनका लेखन पुरुष लेखन से दो कदम आगे का लेखन सिद्ध होगा। इसी दिशा में स्त्री लेखन निरन्तर अग्रसर हो रहा है।

सन्दर्भ

१. कामायनी— जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ ५१, अनुपम प्रकाशन पटना।
२. स्त्री लेखन : स्वप्न और संकल्प, रोहिणी अग्रवाल, पृष्ठ १३, राजकमल प्रकाशन इलाहाबाद।
३. आदमी की निगाह में औरत— राजेन्द्र यादव, पृष्ठ २४, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली।
४. जया जादवानी का वक्तव्य : हंस।
५. आधुनिक हिन्दी कहानी : नारी चेतना, मर्द आलोचना— मृदुला गर्ग, पृष्ठ ३४।
६. मेहरून्निसा परेवज, साहित्य वार्षिकी, पृष्ठ २७।

शोध छात्रा (हिन्दी विभाग)
डॉ० शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास
विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ०प्र०)

पत्र व्यवहार का पता—
बी-१/११, सेक्टर-सी, अलीगंज-२२६०२४
लखनऊ